International Journal of Advanced Research and Development
ISSN: 2455-4030
Impact Factor: RJIF 5.24
www.advancedjournal.com
Volume 3; Issue 1; January 2018; Page No. 394-396

पाश्चात्य दर्शन में सामान्य का नामवादी सिद्धान्त

Amit Kumar Singh
Research Scholar, Department of Philosophy, University of Allahabad, Utter Pradesh, India

सांराश
सामान्य से सम्बन्धित सिद्धान्तों में नामवाद ऐसा सिद्धान्त है जो सामान्यों की स्वतन्त्र सत्ता नहीं मानता उनको नाम के रूप में ही स्वीकार करता है। नामवादियों का मानना है कि सत्ता सिर्फ विशेषों की है, समान्यों की नहीं। सामान्य सिर्फ नाम है और कुछ नहीं। नामवाद के समर्थकों में विलियम ओकम, हॉब्स, बर्कले और ह्यूम का नाम प्रमुख रूप से आता है। ओकम के अनुसार केवल विशिष्ट वस्तुओं का ही अस्तित्व है सामान्यों की सत्ता को वे नकारते हैं। उनके अनुसार तर्कबुद्धि के द्वारा केवल इन्द्रियग्राह्य विषयों का ही ज्ञान प्राप्त हो सकता है। चूँकि सामान्य इन्द्रियग्राह्य नहीं है इसलिए उनकी सत्ता तर्कबुद्धि द्वारा नहीं सिद्ध हो सकती हैं। सामान्य सिर्फ कोरी कल्पना मात्र हैं और कुछ नहीं। थॉमस हॉब्स भी नामवादी हैं उनका विश्वास है कि सामान्य वस्तुएँ केवल सामान्य नाम है, कोई सामान्य वस्तु या सामान्य प्रत्यय नहीं हैं। बर्कले ने भी सामान्य के नामवादी सिद्धान्त का ही समर्थन किया है उनके अनुसार तर्क प्रक्रिया के किसी भी सोपान पर 'सामान्य' की आवश्यकता नहीं होती है। बर्कले के अनुसार अमूर्त प्रत्यय काल्पनिक हैं। वास्तविक सत् केवल मूर्त प्रत्यय ही हो सकते है। अमूर्त प्रत्यय नाम के अतिरिक्त कुछ नहीं है। सामान्यों का अस्तित्व न तो प्रकृति में है और न ही मन में है। इसका अस्तित्व केवल नाम के रूप में है। पाश्चात्य दर्शन में ह्यूम भी नामवादी हैं। उनके अनुसार भी सामान्य की सत्ता नाम के रूप में है उनकी वास्तविक सत्ता नहीं होती है।

मुख्य शब्द : सामान्य, नामवाद, विलियम ओकम, हॉब्स, बर्कले और ह्यूम।

प्रस्तावना
सामान्यों का नामवादी सिद्धान्त अमूर्त प्रत्ययों, सामान्य पदों या सामान्यों की स्वतन्त्र सत्ता नहीं मानता, उनको केवल नाम के रूप में स्वीकार करता है। नामवादियों का मानना है कि सत्ता या अस्तित्व सिर्फ विशिष्ट वस्तुओं का है, सामान्यों का नहीं। सामान्य तो केवल नाम है और कुछ नहीं। नामवादियों के अनुसार सामान्य कोई वास्तविक वस्तु या सत्ता नहीं है, सामान्य केवल नाम है। हम अलग–अलग विशिष्ट वस्तुओं में से कुछ वस्तुओं को एक ही नाम से पुकारते हैं। इसलिए हम ऐसा समझ लेते हैं कि उस नाम के अनुरूप कोई वास्तविक सत्ता भी है, जैसे संसार की सभी विशेष गायों को हम गाय नाम से पुकारते हैं, इसलिए हमें लगता है कि गाय गोत्व एक सामान्य हैं जिसकी अपनी एक स्वतन्त्र सत्ता है और संसार की सभी गायें उसी सामान्य गोत्व या गाय की विशिष्ट उदाहरण हैं, परन्तु नामवादी ऐसा मानने से इन्कार करते हैं। उनका मानना है कि 'गाय' कोई सामान्य नहीं है बल्कि सिर्फ एक नाम है और नाम के अलावा कुछ नहीं है। उसी प्रकार संसार के सभी सामान्य मात्र नाम हैं, उनकी कोई वास्तविक सत्ता नहीं है। सत्ता सिर्फ विशिष्ट वस्तुओं की है। और इन्हीं विशिष्ट वस्तुओं के नाम को सामान्य कहा जाता है। वूज़ले के अनुसार, नामवाद सामान्यों को निश्चित रूप से सादृश्य के द्वारा परिभाष्य मानता है और साथ ही विशेषों में एक मात्र सादृश्य द्वारा उनका एक ही नाम से पुकारा जाना मानता है। इसके अतिरिक्त नामवाद का एक अतिरंजित रूप, जिसके अनुसार विशेषों के एक समूह में एकमात्र समानता उनका एक ही नाम से पुकारा जाना है।[1] सामान्य के सन्दर्भ में नामवादी सिद्धान्त भारतीय दर्शन में बौद्ध मत में मिलता है वहाँ यह मत अपोहवाद के नाम से जाना जाता है।

विलियम ओकम का सामान्य सिद्धान्त
सामान्यों के नामवादी सिद्धान्त का सर्वप्रथम परिचय मध्यकालीन दर्शन में विलियम ओकम के द्वारा प्राप्त होता है। विलियम ओकम नामवाद के प्रथम अन्वेषक माने जाते हैं उन्होंने कहा कि केवल विशिष्ट वस्तुओं का ही अस्तित्व है और हमारा समस्त ज्ञान विशिष्ट वस्तुओं से ही प्रारम्भ होता है।[2] सामान्यों की सत्ता को वे नकारते हैं। उनके अनुसार दर्शन का आधार तर्क है। तर्कबुद्धि के द्वारा अतीन्द्रिय विषयों का ज्ञान नहीं प्राप्त हो सकता है। तर्क के द्वारा केवल इन्द्रियग्राह्य विषयों का ही ज्ञान प्राप्त हो सकता है। उनका तर्क है कि चूँकि सामान्य इन्द्रियग्राह्य नहीं हैं इसलिए उनकी सत्ता तर्कबुद्धि द्वारा नही सिद्ध हो सकती है। सामान्य सिर्फ कोरी कल्पना मात्र है और कुछ नहीं। हमें विशेष वस्तुओं की सत्ता का ज्ञान इन्द्रियानुभव के द्वारा होता है और इन्हीं विशेष वस्तुओं में पायी जाने वाली सर्वनिष्ठ गुणों या विशेषताओं के आधार पर हम सामान्य प्रत्ययों की रचना करते हैं ये सामान्य प्रत्यय सिर्फ विचारों तक सीमित हैं इनका यथार्थ से कोई सम्बन्ध नहीं है, अर्थात ये सामान्य प्रत्यय यथार्थ नहीं हैं और इनकी कोई वस्तुनिष्ठ सत्ता भी नहीं है। विलियम ओकम सामान्य से सम्बन्धित अवधारणाओं का खण्डन करते हैं और दृढ़तापूर्वक बताते हैं कि वास्तविक सत्ता सिर्फ और सिर्फ विशेषों की है किसी अन्य लोक या जगत में रहने वाले सामान्यों की नहीं। विलियम ओकम का मानना है कि सामान्य से सम्बन्धित सिद्धान्त भले ही दोषपूर्ण हो, लेकिन सामान्यों की कल्पना को वे व्यर्थ नहीं कहते हैं क्योंकि सामान्यों के द्वारा अनेक विशेष वस्तुओं की व्याख्या एक बार में ही कर दी जाती है। सामान्य प्रत्ययों के द्वारा अनेक विशेषों को एक बार में व्यक्त किया जा सकता है। ओकम के इस सिद्धान्त को 'ओकम का उस्तरा' (Occam's Razor) कहा गया है। Occam's Razor को प्रायः Don't multiply entities beyond necessity के रूप में व्यक्त किया जाता है।[3] ओकम का यह सिद्धान्त सामान्यों के अनावश्यक अस्तित्व को समाप्त कर देता है।

हॉब्स का सामान्य सिद्धान्त
इसी प्रकार आधुनिक दर्शन में नामवाद का समर्थन विशेष रूप से

हॉब्स, बर्कले, ह्यूम इत्यादि दार्शनिकों ने किया है। थॉमस हॉब्स की प्रसिद्धि एक नामवादी के रूप में अधिक है। उनके नामवाद का केन्द्र बिन्दु या मूल यह विश्वास है कि सामान्य वस्तुएँ केवल सामान्य नाम है, कोई सामान्य वस्तु या सामान्य प्रत्यय नहीं है। शब्दों के अभाव में हम कोई भी सामान्य प्रत्यय नहीं प्राप्त कर सकते हैं।[4] हॉब्स के मतानुसार, वस्तुओं के एक समूह में इसके अलावा कोई भी बात समान नहीं होती कि ये एक ही नाम से पुकारी जाती हैं अर्थात् जगत् में नामों को छोड़कर कोई भी वस्तु सामान्य नहीं है, क्योंकि नाम धारण करने वाली प्रत्येक वस्तु व्यष्टि और विलक्षण होती है।[5] लाइबनीज ने हॉब्स को एक उग्र नामवादी के रूप में निर्दिष्ट किया है। हॉब्स को नामवादी कहने का मुख्य कारण यह है कि वह किसी सामान्य प्रत्यय में विश्वास नहीं रखते कोई भी सामान्य सत्ता या प्रत्यय नहीं है केवल नाम है। हॉब्स के नामवाद को समझने के लिए उभयनिष्ठ या सामान्य नाम के विषय में उनके दृष्टिकोण को समझना होगा। उनका दृष्टिकोण और तर्क उनकी किताबों और अलग–अलग लेखों में बदलते रहे, लेकिन उनका सामान्य लक्षण नहीं बदला बल्कि निश्चित रहा। सामान्य से सम्बन्धित समस्या व्यक्तिवाचक नाम और सामान्य नाम के बीच विभेद की चर्चा से सम्बन्धित है। व्यक्तिवाचक नाम के अन्तर्गत प्रत्येक नाम के अनुरूप एक वस्तु होती है लेकिन सामान्य नाम के अन्तर्गत प्रत्येक नाम एक से अधिक वस्तुओं के लिए होता है। हॉब्स के अनुसार सामान्य नाम केवल सामान्य है इस जगत में सामान्य वस्तु की सत्ता नहीं है कोई सामान्य प्रत्यय नहीं है।[6] हॉब्स ने Summa Logicae में तर्क दिया है कि कहना चाहिए कि प्रत्येक सामान्य एक विशेष वस्तु है और यह अनेक वस्तुओं के अर्थ में सामान्य नहीं है। हॉब्स ने लेवियाथन अध्याय 2 में कहा कि, "जगत् में नामों को छोड़कर कोई भी वस्तु सामान्य नहीं है, क्योंकि नाम धारण करने वाली प्रत्येक वस्तु व्यष्टि और विलक्षण होती है।" उन्होंने कहा कि अनेकव्यापी शब्द के अलावा कोई भी वस्तु सामान्य नहीं है, अर्थात् वस्तुओं के एक समूह में इसके अलावा कोई भी बात समान नहीं होती कि वे एक ही नाम से पुकारी जाती हैं।[7] इसके सिवाय उन्होंने तर्क दिया कि कोई सामान्य वह सत् या वस्तु नहीं है जिनका बुद्धि या मन से स्वतन्त्र अस्तित्व हो, लेकिन उनका कहना है कि प्रत्येक 'सामान्य' बुद्धि का लक्ष्य या उद्देश्य होता है। 1640 ई0 के शुरूआत में हॉब्स का विश्वास था कि कोई सामान्य सत्ता या वस्तु नहीं है, केवल नाम है। हॉब्स ने Elements of Law के अध्याय 5 में नामों का परिचय दिया है, हॉब्स ने सामान्य और एकवचन वाले नामों में अन्तर किया और बताया कि एकवचन नाम एक वस्तु का नाम है जबकि सामान्य नाम एक से अधिक वस्तुओं का नाम है।[8] एक वचन नाम के उदाहरण के रूप में हॉब्स ने सुकरात का उदाहरण दिया है और सामान्य के रूप में उसने 'मनुष्य' का उदाहरण दिया। हॉब्स के अनुसार कुछ समानताओं के आधार पर विशेष पदार्थों को एक वर्ग में रखा जाता है। मेज, कुर्सी, मनुष्य, पशु, पेड़–पौधे इत्यादि इन्हीं समान विशेषताओं के आधार पर एक वर्ग में रखे जाते हैं। विभिन्न प्रकार की विशेष–वस्तुओं में कोई सर्वगत लक्षण अभिन्न नहीं होता है। उनमें केवल इतनी समानता होती है कि वे (विशेष–वस्तुएँ) एक ही सामान्य 'नाम' से पुकारी जाती हैं। इससे स्पष्ट है कि नामवादी के अनुसार सामान्य केवल 'नाम' है। इनका प्रयोग केवल व्यावहारिक दृष्टि से सुविधाजनक होता है। व्यक्ति और विशेष ही सत् है। सामान्य कोरी कल्पना है। जब एक ही शब्द का प्रयोग बार–बार किया जाता है तो लोगों में ये विश्वास पैदा हो जाता है कि उस शब्द का अर्थ वस्तुओं में अन्तर्निहित कोई अपरिवर्तनशील सारतत्व है। इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि सामान्य वास्तव में कुछ नहीं हैं। वे शब्दों में व्यक्त अर्थों और वस्तुओं में समान है।

बर्कले का सामान्य सम्बन्धी सिद्धान्त

नामवाद के अनेक रूप हैं ऊपर जिस नामवाद की चर्चा की गई है उसे उग्र नामवाद की संज्ञा दी जाती है। नामवाद का एक उदाहरण जो उपर्युक्त मत की तरह उग्र नहीं है, बर्कले के विचारों में पाया जाता है। बर्कले के नामवाद को शायद कुछ लोग अवधारणावाद के अन्तर्गत रखना चाहें लेकिन उनका विचार नामवाद का ही रूप है, अवधारणावाद का नहीं। आधुनिक दर्शन में बर्कले, ह्यूम आदि कुछ अन्य दार्शनिकों को भी नामवादी कहा जाता है। बर्कले ने तर्क की प्रक्रिया को विशेष से विशेष की ओर बताया है। बर्कले के अनुसार तर्क–प्रक्रिया के किसी भी चरण या सोपान पर 'सामान्य' की आवश्यकता नहीं होती है। बर्कले अमूर्त प्रत्ययों के सिद्धान्त का खण्डन करता है लेकिन वह सामान्यों का खण्डन नहीं करता है। बर्कले के अनुसार हमारा मन अमूर्त प्रत्ययों की रचना नहीं कर सकता है। मन के द्वारा केवल उन्हीं विशिष्ट वस्तुओं के प्रत्ययों की रचना की जा सकती है जो अनुभव के विषय हैं। अर्थात् यहाँ यह कहा जा सकता है कि जिन वस्तुओं का अनुभव हमारी इन्द्रियाँ करती हैं केवल उन्हीं प्रत्ययों की रचना हमारा मन कर सकता है। चूँकि अमूर्त प्रत्ययों के विषयों का अनुभव हमारी इन्द्रियाँ नहीं कर सकतीं इसलिए हमारा मन अमूर्त प्रत्ययों की रचना करने में असमर्थ है। हम किसी सामान्य सत् की कल्पना नहीं कर सकते हैं। सामान्य सत् से तात्पर्य समस्त गुणों से रहित तत्व से है। ऐसा सामान्य सत् जो गुणों से रहित हो, शून्य होगा, असत् होगा, उनका मन या आत्मा से कोई सम्बन्ध नहीं हो सकता है। बर्कले के अनुसार गतिशील पिण्ड के अतिरिक्त गति के सामान्य प्रत्यय की कल्पना करना असम्भव है। बर्कले के अनुसार तर्क प्रक्रिया विशेष प्रत्यय से विशेष प्रत्यय की ओर अग्रसर होती है उसमें अमूर्त प्रत्ययों का कोई योगदान नहीं होता है। उन्होंने एक उदाहरण देकर इसे समझाया है, त्रिभुज के तीनों अन्तः कोणों का योग दो समकोण के बराबर होता है, एक सार्वभौम सत्य है किन्तु इसकी सिद्धि किसी न किसी विशेष त्रिभुज (समबाहु, समद्विबाहु आदि) के सापेक्ष रूप में ही हो सकती है, इससे सिद्ध होता है कि अमूर्त प्रत्यय काल्पनिक हैं वास्तविक सत् केवल मूर्त प्रत्यय ही हो सकते है। इस प्रकार अमूर्त प्रत्यय 'नाम' के अतिरिक्त कुछ नहीं हैं।[9] सामान्यों का अस्तित्व न तो प्रकृति में है और न मन में है। इसका अस्तित्व केवल नाम के रूप में है। बर्कले का यह मत भारतीय दर्शन के बौद्धों के 'अपोहवाद' के समान है। बौद्धों के अनुसार केवल विशेषों की ही सत्ता है। सामान्य असत् एवं काल्पनिक हैं। सामान्यों की सत्ता शाब्दिक है इस प्रकार बौद्ध दार्शनिक भी पाश्चात्य नामवादियों के समान सामान्यों को वस्तु सत् नहीं मानते हैं।[10]

यद्यपि बर्कले ने अमूर्त प्रत्ययों का खण्डन किया है, पर वह सामान्यों का खण्डन नहीं करते हैं। वे अमूर्त प्रत्यय और सामान्य प्रत्यय में भेद करते हैं। वे अमूर्त प्रत्ययों का तो खण्डन करते हैं, पर सामान्य प्रत्ययों का वे समर्थन करते हैं। इस सन्दर्भ में बर्कले प्रत्यय और अन्तर्बोध में अन्तर को रेखांकित करते हैं। प्रत्यय अनुभव से प्राप्त होते हैं लेकिन अन्तर्बोध आनुभविक नहीं है, बौद्धिक है। इससे आत्मा एवं सामान्यों का ज्ञान प्राप्त होता है। प्रत्ययों का सम्बन्ध विशेष वस्तुओं के ज्ञान से है जबकि अन्तर्बोध से सामान्य सत्ता का, आत्मा का और प्रत्ययों के परस्पर सम्बन्धों का ज्ञान प्राप्त होता है। बर्कले के सामान्य प्रत्यय और प्लेटो के सामान्य प्रत्यय दोनों एक ही नहीं बल्कि दोनों में परस्पर भिन्नता है। प्लेटो के प्रत्यय बौद्धिक हैं। इसके विपरीत बर्कले के सामान्य प्रत्यय विशेष और अनुभव

सापेक्ष हैं। इसी प्रकार बर्कले का 'अन्तर्बोध' लॉक के स्वसंवेदन से भी भिन्न है। जहाँ लॉक का स्वसंवेदन अनुभव जन्म प्रत्यय है, वहीं बर्कले का 'अन्तर्बोध' अनुभव–निरपेक्ष है। बर्कले का अन्तर्बोध और काण्ट के बुद्धि–विकल्पों में भी भिन्नता है। काण्ट के बुद्धि–विकल्प अनुभव के अभाव में रिक्त हैं। इसके विपरीत बर्कले का अन्तर्बोध अनुभव–निरपेक्ष होने के साथ–साथ अपरोक्ष ज्ञान का आधार है। इस सिद्धान्त के आधार पर बर्कले को कुछ आलोचकों ने अपूर्ण काण्ट कहा है।[11]

बर्कले अपनी प्रारम्भिक रचनाओं में ही अमूर्त प्रत्ययों का खण्डन करते हुए दिखते हैं, लेकिन बाद की रचना Siris में सामान्यों का समर्थन करते हैं। बर्कले ने सामान्य प्रत्ययों को प्रतिभा और अर्थ के रूप में स्वीकार किया है। बर्कले ने Siris में ज्ञान प्राप्ति की प्रक्रिया में उपयोगी सार्वभौमिक नियमों की महत्ता को स्वीकारा है। इस तरह हम देखते हैं कि बर्कले किसी न किसी रूप में सामान्यों को स्वीकारता है। किन्तु वह सामान्यों को आनुभविक नहीं बल्कि अन्तर्बोध का विषय मानता है। सामान्यों को अमूर्त प्रत्ययों से पृथक नहीं किया जा सकता। सामान्य का ज्ञान न तो अमूर्तिकरण से हो सकता है और न ही अनुभव से हो सकता है। और जब अमूर्त प्रत्ययों का खण्डन होता है तो साथ ही सामान्य प्रत्ययों का भी खण्डन हो जाता है क्योंकि वास्तव में अमूर्त प्रत्यय सामान्य प्रत्यय है। इस आधार पर बर्कले के सिद्धान्त को भी 'नामवाद' (Nomnalism) ही कहा जाएगा।

ह्यूम का सामान्य सम्बन्धी सिद्धान्त

सामान्य के नामवादी विचारधारा के अन्तर्गत ह्यूम का नाम भी प्रमुखता से लिया जाता है। उसका नामवाद भी अनुभव पर आधारित है। ह्यूम प्रत्यक्ष के दो प्रकार संस्कार एवं प्रत्यय को मानता है।[12] बाह्य वस्तुओं का जब ज्ञानेन्द्रियों से सम्पर्क होता है तो उससे उत्पन्न सम्वेदनों तथा स्वसम्वेदनों को ह्यूम संस्कार कहता है। संस्कार सजीव और स्पष्ट प्रत्यक्षात्मक अनुभूतियों से सम्बन्धित होता है। इसके विपरीत, प्रत्यय संस्कारों पर आश्रित होते हैं और धुंधले, निर्बल और कम स्पष्ट होते हैं। संस्कार मौलिक होते हैं और प्रत्यय गौण। ह्यूम के अनुसार मानव प्रत्यक्ष के कोई भी दो संस्कार पूर्णतया अवियोजनीय नहीं हो सकते। वे ये भी कहते हैं कि जो विचार में वियोजनीय है उनका स्वतंत्र अस्तित्व होना चाहिए। वे मानव स्वभाव पर ग्रन्थ (A Treatise on Human Nature) के परिशिष्ट में लिखते हैं: "जो वस्तुएँ भिन्न है उनका भेद दिखाया जा सकता है, और जिन वस्तुओं का भेद दिखाया जा सकता है वे चिन्तन या कल्पना द्वारा पृथक की जा सकती है। सभी प्रत्यक्ष भिन्न है। अतः उनको भिन्न तथा पृथक किया जा सकता है। उनको पृथकतया सत् समझा जा सकता है। वे बिना किसी असंगति के सत् हो सकते हैं।" उपरोक्त कथन से स्पष्ट है कि हमारे सभी प्रत्यक्ष चाहें वे संस्कार हों या विज्ञान, अस्तित्व के पृथक परमाणु हैं। अतः उनके बीच साहचर्य केवल आपातिक और सम्बन्ध साधारण ही हो सकता है। जिस सिद्धान्त के अनुसार हमारा सम्पूर्ण अनुभव मूल वियोजनीय परमाणुओं में घटित किया जा सकता है, मनोवैज्ञानिक परमाणुवाद कहलाता है।

यदि मानवीय प्रत्यक्ष के सभी संस्कार और विज्ञान मनोवैज्ञानिक परमाणु हैं और एक परमाणु का दूसरे परमाणु से कोई संबंध नहीं है तो क्या ऐसी स्थिति में ह्यूम के दर्शन में अमूर्त सामान्य प्रत्ययों का कोई स्थान हो सकता है? लॉक ने सभी प्रत्ययों को विशेष माना और अमूर्त प्रत्ययों की कल्पना की। बर्कले ने लॉक के अमूर्त प्रत्ययों का खण्डन किया और कहा कि हम किसी भी आकृति को बिना आकार के कल्पना नहीं कर सकते। उसने केवल विशेषों के अस्तित्व को ही स्वीकारा और कहा कि ये विशेष किसी समान वस्तु के सदस्यों के संकेत रूप में कार्य कर सकते हैं। ह्यूम ने इन दोनों से आगे बढ़कर कहा कि जो भेदनीय है वह वियोजनीय अवश्य होगा, अर्थात् जो भेदनीय नहीं है वह वियोजनीय नहीं हो सकता। आकार, आकृति और रंग वियोजनीय नहीं है, अतः वे भेदनीय भी नहीं हो सकते। हम किसी ऐसी आकृति की कल्पना नहीं कर सकते जिसका कोई आकार या रंग न हो। सामान्य विशेषताएँ (General Characters) तो हो सकती हैं पर सामान्य प्रत्यय की कल्पना बाधित कल्पना है।

ह्यूम के अनुसार कोई सामान्य प्रत्यय नहीं है, सामान्य केवल नाम है जो किन्हीं विशिष्ट वस्तुओं की सामान्य विशेषताओं या सादृश्यों की ओर निर्देश करता है। दर्शन में सामान्य के इस सिद्धान्त को नामवाद कहते हैं। ह्यूम के ही शब्दों में : "सामान्य प्रत्यय विशिष्ट प्रत्ययों के अतिरिक्त कुछ नहीं है जो किसी पथ के साथ संयुक्त कर दिये जाते हैं जो उन्हें एक विस्तृत महत्व प्रदान करता है और जो अवसरानुकूल ऐसे व्यष्टियों का प्रत्यावाहन करता है जो उनके समान होते हैं।"[13] ह्यूम के अनुसार, अमूर्त प्रत्यय स्वयं में विशिष्ट या विशेष होते हैं जबकि वे अपने निरूपण में सामान्य हो सकते हैं। यह सिद्धान्त आधुनिक दर्शन में नामवाद के नाम से जाना जाता है।[14]

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. Woozley AD. An Introduction to Theory of Knowledge, (Translated by G. Bhatt), Bihar Hindi Granth Academy, Patna, 1971, 90.
2. Thilly, Frank. A History of Philosophy, H. Holt and Company, New York, 1914, 215.
3. Entities or principles should not be unnecessarily multiplied. Thilly, Frank. A History of Philosophy, H. Holt and Company, New York, 1914, 216.
4. Russell, B. History of Western Philosophy, George Allen and Unwin Ltd., London, 1946, 571.
5. Woozley. A.D. An Introduction to Theory of Knowledge, (Translated by G. Bhatt), Bihar Hindi Granth Academy, Patna, 1949-1971, 92.
6. Duncan, Stewart, Hobbes's Materialism in the Early 1640s, British Journal for the History of Pilosophy. 2005; 13:437-48.
7. Woozley AD. An Introduction to Theory of Knowledge, (Translated by G. Bhatt), Bihar Hindi Granth Academy, Patna, 1949-1971, 92.
8. Duncan, Stewart. Hobbes, Signification and Insignificant Names, Hobbes Studies 24 London, 2011, 158.
9. Thilly, Frank. A History of Philosophy, H. Holt and Company, New York, 1914, 336-337.
10. 'नास्माभिरपोहशब्देन विधिरेव केवलोऽभिप्रेतः नाप्यन्यव्यावृत्ति मात्रं, किन्तु अन्यापोहविशिष्टो विधिः शब्दानामर्थः।' अपोहसिद्धिः, पृष्ठ 3, रत्नकीर्ति निबन्धावली, काशी प्रसाद जायसवाल अनुशीलन संस्थान, पटना, 1957।
11. Frazer AC. Berkley, William Blackwood & Sons, London, 1881, 128.
12. Hume, David. A Treatise on Human Nature, Oxford University Press, London, 1739, 1.
13. Russell B. History of Western Philosophy, George Allen and Unwin Ltd., London, 1946, 686-687.
14. Ibid, 687.